आतंकी हमलेके संकेत

जम्मू-कश्मीरके कुलगाम जिलेमें बुधवारको अपराह्न लगभग सवा दो बजे सीआरपीएफ नाकेपर बाइक सवार आतंकियोंका हमला इस बातका संकेत है कि कश्मीरमें आतंकवादकी चुनौती अभी समाप्त नहीं हुई है। यह हमला केवल सुरक्षाबलोंके जवानोंको निशाना बनानेकी घटना नहीं है, बल्कि कश्मीर घाटीमें आतंकवादकी बदलती रणनीति, आतंकियोंकी छिपी गतिविधियों और सुरक्षा व्यवस्थाके समक्ष मौजूद चुनौतियोंकी ओर भी संकेत करता है। यह घटना इसलिए भी गम्भीर चिन्ताका विषय है कि कश्मीरमें स्थानीय आतंकियोंकी संख्या काफी कम रह जाने और आतंकवादी नेटवर्कको कमजोर करनेके सरकारी दावोंके बीच आतंकियोंने दिन दहाड़े सुरक्षाबलोंपर हमला करनेका कायराना दुस्साहस कैसे किया है। हमलेमें तीन जवान घायल हुए हैं, जिनमें एककी हालत गम्भीर है। कड़ी सुरक्षाके बीच हुए इस हमलेको अत्यन्त ही गम्भीरतासे लेनेकी आवश्यकता है। घटनाके बाद घेराबन्दी कर तलाशी अभियान भी शुरू हो गया है। सुरक्षाबलोंने भी जवाबी काररवाई की जिससे हमलावर भाग गये। लगभग १५ सेकेण्डमें ३० गोलियां चलनेकी आवाज सुनायी पड़ी। यह हमला पूरी तैयारीके साथ किया गया था। इस घटनाके अनेक पहलुओंका विश्लेषण किया जाना चाहिए। यह घटना बताती है कि जम्मू-कश्मीरमें सक्रिय आतंकी मौजूद हैं। सुरक्षाबलोंको निशाना बनानेका यह भी उद्देश्य हो सकता है कि उनमें भय उत्पन्न किया जाय जिससे कि उनकी कार्य क्षमता प्रभावित हो। अचानक हमला और तुरन्त भाग निकलनेकी रणनीति बनायी गयी थी। खुफिया सूचनाओं और जमीनी सुरक्षाके बीच समन्वयमें कमीके भी संकेत मिलते हैं। इन सभी पहलुओंकी गहराईसे जांच करनेकी आवश्यकता है। यह घटना आतंकियोंकी हताशा है या उनकी नयी रणनीति है, इसपर भी मंथन करना होगा। एक सवाल यह भी उठता है कि क्या आतंकवादी छोटे हमलोंके माध्यमसे अपनी सक्रियता प्रदर्शित करनेकी रणनीति अपना रहे हैं? इस घटनाका महत्वपूर्ण पहलू स्थानीय और विदेशी आतंकियोंके सम्भावित गठजोड़से भी जुड़ा है। एक सवाल यह भी है कि क्या कश्मीरमें आतंकवाद फिर सिर उठानेकी कोशिश कर रहा है। इस दुखद और निन्दनीय घटनाके बाद अब सुरक्षाबलोंको अपनी नयी रणनीति बनानी होगी। सीमापार आतंकवादपर कूटनीतिक दबाव बनानेकी जरूरत है। साथ ही स्थानीय जनताका भी विश्वास जीतना होगा। आतंकवादके विरुद्ध लड़ाईमें किसी प्रकारकी ढिलाईकी गुंजाइश नहीं होनी चाहिए।

स्वच्छ सर्वेक्षण

नदी तटपर बसे शहरोंको पीछे छोड़ते हुए उत्तर प्रदेशके वाराणसीको देशका तीसरा सबसे स्वच्छ शहरका सम्मान हासिल करना काशीवासियोंके लिए गर्वकी बात है। नयी दिल्ली स्थित विज्ञान भवनमें स्वच्छता सर्वेक्षण २०२५-२६ के बेस्ट रिवर फ्रंट टाउन वर्गमें वाराणसीको इस उपलब्धिके लिए राष्ट्रपति पुरस्कारसे सम्मानित किया गया। राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मूने वाराणसी नगर निगमको यह पुरस्कार प्रदान किया। जबकि इस श्रेणीमें मध्यप्रदेशके रीवाको पहला और छत्तीसगढ़के विलासपुरको दूसरा स्थान मिला। अभीतक इस श्रेणीमें केवल गंगा किनारे शहरोंके बीच प्रतियोगिता होती थी। यह पहली बार है जब देशमें नदी किनारे बसे शहरोंके बीच हुई प्रतियोगितामें वाराणसीको यह बड़ी उपलब्धि हासिल हुई। पुरस्कारकी सूचना मिलते ही स्थानीय नगर निगम मुख्यालयमें उत्सवका माहौल दिखा। नगर निगमके अनुसार वर्ष २०२० से अबतक हुए सभी छह सर्वेक्षणोंमें वाराणसी लगातार शीर्ष शहरोंमें अपनी पहचान बनाये रखनेमें सफल रहा। इस बार प्रतिस्पर्धा केवल गंगाके किनारे बसे शहरोंसे नहीं, बल्कि देशकी प्रमुख नदियों वाले शहरोंसे भी थी। उत्तर प्रदेशके मुख्य मंत्री योगी आदित्यनाथने स्वच्छ सर्वेक्षण पुरस्कारमें वाराणसीकी रैंकिंगपर खुशी व्यक्त करते हुए काशीवासियोंको बधाई दी। उन्होंने इस उपलब्धिका श्रेय नगरवासियोंकी जागरूकता, नगर निगम कर्मियोंके अथक प्रयास और स्वच्छता स्वयं सेवकोंके समर्पण और जन-प्रतिनिधियोंकी सक्रियताको दिया है। इस बारके स्वच्छ सर्वेक्षणमें अलग-अलग श्रेणियोंमें उत्तर प्रदेशके दो शहर तीसरे स्थानपर हैं। सबसे साफ नदी तट वाली श्रेणीमें जहां वाराणसी तीसरे स्थानपर रहा, वहीं दस लाखसे अधिक आबादी वाले शहरोंमें राजधानी लखनऊ नम्बर तीनपर रहा, जो प्रदेशके स्वच्छता अभियानकी सफलताको रेखांकित करता है। इसकी यथास्थिति बनाये रखनेकी जरूरत है, क्योंकि स्वच्छता ही स्वास्थ्यकी कुंजी है।

लोक संवाद

न्यायिक जीत

महोदय,- हिमाचल प्रदेशने अपनी जमीन, जल और प्राकृतिक संसाधन देकर देशकी बड़ी जलविद्युत परियोजनाओंमें योगदान दिया, लेकिन उनके लाभसे लम्बे समयतक वंचित रहा। पड़ोसी राज्योंको बिजली मिलती रही, जबकि हिमाचल अपने वैधानिक हिस्सेकी प्रतीक्षा करता रहा। सुप्रीम कोर्टके हालिया फैसलेने छह दशक पुराने इस विवादके समाधानका रास्ता खोलते हुए बिजलीके अधिकारको समयबद्ध आपूर्तिकी व्यवस्थामें बदल दिया है। हिमाचल सरकारका दावा है कि किशाऊ बहुउद्देशीय बांध समझौतेपर अपनी सहमतिको हरियाणा द्वारा सुप्रीम कोर्टमें हलफनामा दाखिल कर बीबीएमबीकी बकाया बिजलीके हिस्सेके निबटारेपर आपत्ति न जतानेसे जोड़ दिया था। किशाऊ परियोजनासे मिलने वाले अतिरिक्त पानीमें हरियाणाकी रुचिको रणनीतिक आधार बनाकर गतिरोध तोड़नेकी कोशिश की गयी। हिमाचल सरकारके हस्तक्षेपसे समाधानकी प्रक्रिया आगे बढ़ी हो सकती है, लेकिन इससे वह अधिकार पैदा नहीं हुआ, जिसे २०११ में ही न्यायिक मान्यता मिल चुकी थी। पूर्व मुख्य मंत्री, प्रेम कुमार धूमलने इस मामलेमें आपत्ति जताते हुए कहा कि हिमाचलके अधिकारोंके लिए भाजपाका योगदान १९९० में शांता कुमार सरकारके समयसे शुरू हुआ था। वर्ष १९९६ में वीरभद्र सिंह सरकार द्वारा सुप्रीम कोर्टमें मुकदमा दायर किये जानेके बाद १९९८ में सत्तामें आयी उनकी पहली सरकारने इस मामलेकी पैरवीको और मजबूत किया। भाखड़ा बांधके निर्माणसे तत्कालीन बिलासपुर रियासतके बड़े भूभाग जलमग्न हुए, जबकि ब्यास परियोजनाओंके कारण कांगड़ाके लोगोंको विस्थापन झेलना पड़ा। हिमाचलने अपने क्षेत्रीय और जनसंख्या संबंधी योगदानके आधारपर बीबीएमबीकी बिजलीमें ७.१९ प्रतिशत हिस्सेदारीका दावा किया। पंजाब और हरियाणाको उनके हिस्से मिलते रहे, जबकि हिमाचलको रियायती दरपर सीमित बिजली आवंटित की जाती रही। वर्ष १९९६ में वीरभद्र सिंह सरकारने संविधानके अनुच्छेद १३१ के तहत सुप्रीम कोर्टका दरवाजा खटखटाया। २७ सितंबर, २०११ को अदालतने भाखड़ा-नंगल और ब्यास परियोजनाओंसे हिमाचलके ७.१९ प्रतिशत अधिकारको मान्यता दी। मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांतकी अध्यक्षता वाली पीठने आखिरकार नकद भुगतानके बजाय बिजलीकी आपूर्तिके माध्यमसे देनदारीका निबटारा किया। हिमाचलकी पूंजीगत लागतकी देनदारी ४२०.७७ करोड़ रुपये निर्धारित की गयी, जिसमें पंजाबको २४९.२३ करोड़ और हरियाणाको १७१.५५ करोड़ रुपये दिये जाने थे। प्रति यूनिट ३.८५ रुपयेकी दरसे लगभग १,०९३ मिलियन यूनिट बिजलीका समायोजन इस देनदारीके विरुद्ध किया गया। इसके बाद हिमाचलका शुद्ध बिजली अधिकार ११,९७३ मिलियन यूनिट रह गया। पंजाब और हरियाणा अगले २० वर्षोंतक अक्तूबरसे मार्चके बीच बिजलीकी कमी वाले मौसममें प्रतिवर्ष लगभग ६५३ मिलियन यूनिट बिजलीकी आपूर्ति करेंगे। भाखड़ा-नंगल परियोजनाके लिए दोनों राज्योंके बीच ५८:४२ और ब्यास परियोजनाके लिए ६०:४० का अनुपात निर्धारित किया गया है। सुप्रीम कोर्टने अपने निर्देशोंको बाध्यकारी बनाया है। हिमाचलके लिए यह बिजली महत्वपूर्ण आर्थिक संसाधन साबित हो सकती है। सरकारका अनुमान है कि छह रुपये प्रति यूनिटकी दरसे बिजली बेचनेपर राज्यको सालाना लगभग ५०० करोड़ रुपये मिल सकते हैं। ऊंची दरोंपर यह राशि १,००० करोड़ रुपयेतक पहुंच सकती है। **-के. एस. तोमर, वाया ईमेल।**

वैश्विक चर्चाओंका हिस्सा नहीं भारत

तीन दशकसे अधिक समयसे भारतीय शेयरोंमें निवेशका इतना खराब विदेशी रुझान देखनेको मिल रहा है। भारत अब वैश्विक चर्चाओंका हिस्सा नहीं है। सितंबर २०२४ में भारतीय बाजारोंके अपने उच्चतम स्तरपर पहुंचनेके बादसे विदेशी पोर्टफोलियो निवेशक ६५ अरब डालरकी राशि बाहर भेज चुके हैं।

❐ आकाश प्रकाश

बीते एक दशकमें विशुद्ध रूपसे देखें तो भारतको शून्य विदेशी निवेश मिला है। विदेशी निवेशकोंके पास मौजूद भारतीय शेयरोंका कुल मूल्य ९३० अरब डालरसे घटकर लगभग ६७५ अरब डालर रह गया है। विदेशी निवेशकोंकी हिस्सेदारी भी पिछले १५ वर्षोंके निचले स्तरपर पहुंच गयी है। वैश्विक निवेशकोंके बीच भारतको लेकर यही समझ बन गयी है कि पोर्टफोलियोमें भारतीय शेयरोंका वजन कम रखा जाय। एमएससीआई इमर्जिंग मार्केट इंडेक्समें भारतका वेटेज सितंबर २०२४ के २१ फीसदीसे घटकर आज लगभग दस फीसदी रह गया है। महज एक कम्पनी टीएसएमसीका इस मानक सूचकांकमें भार पूरे भारतके भारसे ५० फीसदी अधिक है! उभरते बाजारोंकी तीन दिग्गज कम्पनियां यानी टीएसएमसी, सैमसंग इलेक्ट्रॉनिक्स और एसके हाइनिक्स मिलकर इस सूचकांकमें ३० फीसदी हिस्सेदारी रखती हैं जो भारतके कुल भारसे लगभग तीन गुना है। सितम्बर २०२४ में अपने शिखरपर पहुंचनेके बादसे भारतीय शेयरोंमें डालरके संदर्भमें लगभग २५ फीसदीकी गिरावट आयी है जबकि इसी अवधिमें उभरते बाजारोंके सूचकांक लगभग ५० फीसदी चढ़े हैं।



पिछले बीस वर्षोंमें रुपयेके संदर्भमें निफ्टी सूचकांकने सालाना लगभग १०.५ फीसदीका रिटर्न दिया है। यदि इसमें पूंजीगत लाभ करका लगभग १५ फीसदी प्रभाव मान लिया जाय जो अल्पकालिक पूंजीगत लाभ करकी २० फीसदी दर और दीर्घकालिक पूंजीगत लाभ करकी १२.५ फीसदी दरका औसत है तो रिटर्न घटकर लगभग ८.९ फीसदी रह जाता है। यदि रुपयेके मूल्यमें सालाना लगभग चार फीसदीकी गिरावटको भी शामिल किया जाय जो २० वर्षोंका औसत है तो डालरके सन्दर्भमें रिटर्न घटकर लगभग छह फीसदी रह जाता है।

इस तरह पिछले दो वर्षोंमें हमारा प्रदर्शन ७५०० आधार अंक यानी ७५ फीसदी कमजोर रहा। इसने कितने लोगोंके करियर तबाह कर दिये हैं और कई फंडोंको भारी नुकसान पहुंचाया है। ऐसे अनेक फंड हैं जिनका भारतमें अधिक निवेश करनेके कारण पिछले २४ महीनोंमें ही दस वर्षोंका प्रदर्शन रिकार्ड तबाह हो गया है। हालांकि यह तर्क है कि भारतका सापेक्ष और निरपेक्ष प्रदर्शन जल्द ही पलट सकता है और उसमें सुधार देखनेको मिल सकता है। आखिर एशियाकी तीन कम्पनियोंका सूचकांकमें कुल भार भारत जैसे आकार और संभावनाओं वाले देशसे तीन गुना कैसे हो सकता है। यह बात हास्यास्पद लगती है कि एशियाकी तीन प्रौद्योगिकी कम्पनियोंका किसी सूचकांकमें भार दुनियाकी कुल आबादीके लगभग ४० फीसदीके बराबर हो सकता है। पहली बार पूछा जा रहा है कि क्या भारतके लिए अलगसे निवेश आवंटन रखनेकी जरूरत है। कई निवेश आवंटनकर्ताओंको नहीं लगता कि भारत इतना महत्वपूर्ण है कि उसके लिए विशेष रूपसे निवेश आवंटित किया जाय। भारतपर अलगसे दांव लगाने और जोखिम उठानेकी जरूरत क्या है जब भारतीय बाजारका प्रदर्शन इतना खराब रहा है। बीस साल पहले हर निवेश आवंटनकर्ताके पास चीन और ब्राजीलके लिए अलगसे निवेश राशि होती थी जबकि भारतको लेकर बहस होती थी। समयके साथ यह धारणा बन गयी कि उभरते बाजारोंमें निवेश करनेके लिए भारत, चीन और ब्राजीलके लिए अलग-अलग पूंजी आवंटन जरूरी है।

निवेश आवंटनकर्ताओंकी अनिच्छा एक बड़ा नकारात्मक संकेत है। इससे देशमें आने वाले विदेशी इक्विटी निवेशकी मात्राके साथ-साथ पूंजीके स्रोतोंकी विविधता भी सीमित होगी। किसी देशमें विशेष आवंटनके बजाय सामान्य निवेशके माध्यमसे मिलने वाला निवेश स्वभावतः बाजारके चक्रीय उतार-चढ़ावपर अधिक निर्भर होता है। सोचमें यह बदलाव क्यों आया है। सबसे पहला कारण उभरते बाजारोंके सूचकांकमें भारतकी घटती हिस्सेदारी है। अब हमारा भार केवल दस फीसदी रह गया है जो पहलेकी तुलनामें आधा है। वहीं ताइवान, दक्षिण कोरिया और चीन मिलकर उभरते बाजारोंके सूचकांकका ७० फीसदी हिस्सा रखते हैं। ऐसेमें क्या भारतमें निवेश करनेकी जरूरत है। पिछले दस वर्षोंमें भारतीय बाजारने वैसे भी उभरते बाजारोंके सूचकांकोंकी तुलनामें सालाना लगभग १८० आधार अंक यानी १.८ फीसदी कम रिटर्न दिया है। यहांतक कि २० वर्षोंके आधारपर भी भारतका प्रदर्शन बहुत मामूली रहा है। यह धारणा भी कमजोर पड़ रही है कि कम्पनियोंकी गुणवत्ता, विकासकी निरन्तरता और उद्यमशीलताकी ऊर्जाके कारण भारतमें निवेश करना जरूरी है। अब यह विश्वास कम हो रहा है कि भारतके पास आने वाले कई दशकोंतक मजबूत आर्थिक विकासकी सम्भावनाएं हैं। कई निवेशक इस निष्कर्षपर पहुंच गये हैं कि भारत शायद इतना रिटर्न नहीं दे पायगा जिससे निवेशकोंको पर्याप्त निरपेक्ष रिटर्न मिल सके। उनकी गणना इस प्रकार है।

पिछले बीस वर्षोंमें रुपयेके संदर्भमें निफ्टी सूचकांकने सालाना लगभग १०.५ फीसदीका रिटर्न दिया है। यदि इसमें पूंजीगत लाभ करका लगभग १५ फीसदी प्रभाव मान लिया जाय जो अल्पकालिक पूंजीगत लाभ करकी २० फीसदी दर और दीर्घकालिक पूंजीगत लाभ कर की १२.५ फीसदी दरका औसत है तो रिटर्न घटकर लगभग ८.९ फीसदी रह जाता है। यदि रुपयेके मूल्यमें सालाना लगभग चार फीसदीकी गिरावटको भी शामिल किया जाय जो २० वर्षोंका औसत है तो डालरके सन्दर्भमें रिटर्न घटकर लगभग छह फीसदी रह जाता है। जबकि भारतके जटिल है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंसके कारण वैश्विक स्तरपर सबसे अधिक नुकसान उठाने वाले देशोंमें भी भारतको देखा जा रहा है। इसकी वजह यह है कि एआई-केन्द्रित दुनियामें भारतके अनुकूल जनसांख्यिकी और कुशल दफ्तरी कार्यबलकी प्रासंगिकता घट रही है। वैश्विक स्तरपर मूल्य सृजनको गति देने वाले नवाचार और शोध एवं विकासको भारतकी कमजोरियां माना जा रहा है। इस तर्कका खंडन किया जा सकता है लेकिन बहुतसे निवेश आवंटनकर्ता इसपर विश्वास करते हैं। यदि भारत एक स्वतंत्र निवेश परिसंपत्ति वर्गके रूपमें अपना आकर्षण खो देता है तो यह चिन्ताका विषय होगा। इससे देशमें दीर्घकालिक संरचनात्मक निवेश पूंजीका प्रवाह कम होगा और वैश्विक निवेश आवंटनकर्ताओंकी नजरमें भारतकी प्रासंगिकता भी घटेगी। तमाम आंकड़े भारतको लेकर और अधिक नकारात्मक होनेका कारण बननेके बजाय बाजारमें विपरीत रुझानके संकेतक हैं। इनमेंसे अधिकांश कारक चक्रीय प्रकृतिके हैं और समयके साथ परिस्थितियां बदलेंगी। इस बीच हमें इस बातका ध्यान रखना होगा कि वैश्विक निवेशकोंके निवेश विकल्पोंकी सूचीमें भारतकी स्थिति और नीचे न खिसक जाय।

जनताके असंतोषको दर्शाते परिणाम

ट्रम्प अपनी नीतियों, ईरानके साथ युद्धके कारण हारे या फिर अमेरिका केवल यूरोप और दुनियाके अन्य हिस्सोंमें चल रहे एक बड़े राजनीतिक आन्दोलनको प्रतिबिंबित कर रहा है। ट्रम्पने हमेशा शक्ति प्रदर्शनमें विश्वास किया है।

❐ सी. देवी

अमेरिकी मध्यावधि चुनावोंमें डोनाल्ड ट्रम्पकी हार रिपब्लिकन पार्टीके लिए एक झटकेसे कहीं अधिक है। यह हर जगहके राजनेताओंके लिए एक चेतावनी है कि एक बार हासिल की गयी सत्ताको कभी भी स्थायी या गृहीत नहीं माना जा सकता। कांग्रेसके दोनों सदनोंपर नियंत्रण हासिल करते हुए डैमोक्रेट्सकी व्यापक जीतने आम अमरिकियोंके बढ़ते असंतोष को उजागर कर दिया है, जो ऐसे नेतृत्वसे निराश थे, जो उनके रोजमर्राके सरोकारोंसे लगातार कटता जा रहा था। सवाल यह है कि क्या ट्रम्प अपने घमंड, अपनी नीतियों, ईरानके साथ युद्धके कारण हारे या फिर अमेरिका केवल यूरोप और दुनियाके अन्य हिस्सोंमें चल रहे एक बड़े राजनीतिक आन्दोलनको प्रतिबिंबित कर रहा है। इसका उत्तर शायद इन सभी कारकोंका एक संयोजन है। ट्रम्पने हमेशा शक्ति प्रदर्शनमें विश्वास किया है। उनकी राजनीतिक शैली टकराव वाली है, उनकी भाषा अक्सर कठोर होती है और उनका आत्मविश्वास कभी-कभी घमंडकी सीमाको छूने लगता है। उन्होंने बार-बार खुदको अमेरिकाको बचानेमें सक्षम एकमात्र व्यक्तिके रूपमें पेश किया है। लेकिन एक समय ऐसा आता है जब सत्ताका निरन्तर प्रदर्शन उन लोगोंको भी दूर करने लगता है, जिन्होंने कभी इसका समर्थन किया था। कई अमेरिकी इस निष्कर्षपर पहुंचते दिखे कि उनके राष्ट्रपति अपनी कठिनाइयोंको समझनेकी बजाय अपने अधिकारका प्रदर्शन करनेमें अधिक चिंतित थे। हालांकि अर्थव्यवस्था चुनावी परिणामका सबसे शक्तिशाली स्पष्टीकरण बनी हुई है। ट्रम्पने कीमतें नीचे लाने और आम अमेरिकियोंके जीवनमें सुधार करनेका वादा किया था। इसकी बजाय, किरानेका सामान, आवास, स्वास्थ्य सेवा और रोजमर्राकी जरूरतोंका खर्च परिवारोंपर भारी पड़ता रहा। मुद्रास्फीति केवल एक आर्थिक आंकड़ा नहीं, यह किसी परिवारके बचत करनेमें सक्षम होने और अगले वेतनके दिनतक जीवित रहनेके लिए संघर्ष करनेके बीचका अंतर है।

अमेरिकी उद्योगोंकी रक्षाके उद्देश्यसे बनायी गयी उनकी टैरिफ नीतियोंने भी आर्थिक अनिश्चितता और उच्च लागतमें योगदान दिया। जिन मतदाताओंको तत्काल राहतकी उम्मीद थी, वे यह सवाल उठाने लगे कि क्या ये नीतियां वास्तवमें उनके पक्षमें काम कर रही हैं। अमेरिकी मतदाता ट्रम्पको एक और मौका देनेके लिए तैयार रहे होंगे लेकिन धैर्यकी भी एक सीमा होती है। ईरानके साथ युद्ध एक और निर्णायक कारक बन गया। इस संघर्षने अनिश्चितता, बढ़ती ऊर्जा लागत और यह सवाल पैदा किया कि अमेरिका एक और लम्बे सैन्य जुड़ावमें क्यों शामिल हुआ। ऐसे समयमें जब परिवार जीवनयापनकी लागतसे जूझ रहे थे, युद्धपर भारी राशि खर्च करनेके विचारको उचित ठहराना बेहद मुश्किल हो गया। ट्रम्पने खुद स्वीकार किया कि ईरान युद्धने चुनावको प्रभावित किया था। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि विदेश नीति, जो अक्सर आम मतदातासे दूर दिखाई देती है, अंततः घरेलू बजटमें अपना रास्ता तलाश ही लेती है। ईंधनकी ऊंची कीमतें, अंतरराष्ट्रीय बाजारोंमें अनिश्चितता और तनाव बढ़नेका डर हर किसीको प्रभावित करता है।

यूरोपने लोकलुभावन पार्टियोंके उदय, विरोध प्रदर्शनों और राजनीतिक अस्थिरताको देखा है। आर्थिक तंगी, जनताके असंतोष और बदलती राजनीतिक निष्ठाओंके दबावमें सरकारें गिर गयी हैं या कमजोर हो गयी हैं। फिर भी यह प्रवृत्ति एक समान नहीं है। कुछ देशोंमें, लोकलुभावन आन्दोलन मजबूत हो रहे हैं, दूसरोंमें मतदाता उन्हें खारिज कर रहे हैं। सांझा सूत्र यह है कि पारम्परिक राजनीतिक निष्ठाएं कम भरोसेमंद होती जा रही हैं। मध्य पूर्वमें अनिश्चितता एक और आयाम जोड़ती है। युद्ध, विस्थापन, ऊर्जा असुरक्षा और अंतरराष्ट्रीय तनावने यह भावना पैदा की है कि दुनिया तेजीसे अस्थिर होती जा रही है। हर जगह नागरिक पूछ रहे हैं कि क्या उनकी सरकारें उनके आर्थिक हितोंकी रक्षा करने और एक सुरक्षित भविष्य प्रदान करनेमें सक्षम हैं। विश्वासका एक गहरा संकट भी है। राजनेताओंको अब उनके भाषणोंसे नहीं, बल्कि इस बातसे आंका जाता है कि वे परिणाम देते हैं या नहीं। बड़ी घोषणाएं, अंतरराष्ट्रीय शिखर सम्मेलन और शक्तिका प्रदर्शन बेरोजगारी, महंगे आवास या खाद्य पदार्थोंकी बढ़ती कीमतोंकी भरपाई नहीं कर सकते। इसलिए ट्रम्पकी हारकी व्याख्या केवल एक व्यक्तिकी अस्वीकृतिके रूपमें नहीं की जानी चाहिए। यह राजनीतिक व्यक्तित्वकी सीमाओं और जनताके असंतोषकी उपेक्षाके परिणामोंको दर्शाती है। उनके विरोधियोंके पास अब बदलावके वादोंको पूरा करनेका अपना कठिन कार्य हो सकता है। चुनाव जीतना एक बात है, सफलतापूर्वक शासन करना दूसरी। आर्थिक वृद्धि, बुनियादी ढांचा और अंतरराष्ट्रीय स्थिति महत्वपूर्ण हैं लेकिन आम नागरिक किफायती जरूरतें, रोजगार, सुरक्षा और सम्मान भी चाहता है। कोई भी सरकार यह नहीं मान सकती कि उसकी लोकप्रियता आर्थिक तंगीसे अछूती रहेगी। दुनिया एक ऐसे दौरमें प्रवेश कर रही है, जिसमें मतदाता अधिक तत्काल उत्तरोंकी मांग कर रहे हैं। उनके पास घमंड, राजनीतिक नाटकबाजी और अधूरे रह जाने वाले वादोंके लिए कम धैर्य है। अंततः ट्रम्पकी हार हमें याद दिलाती है कि लोकतंत्रके पास सत्ताकी ज्यादतियोंको सुधारनेका एक तरीका है। मतपेटी उन लोगोंकी आवाज बन जाती है जो खुदको अनसुना महसूस करते हैं और जब वह आवाज इतनी मजबूत हो जाती है तो सबसे शक्तिशाली नेताको भी सुनना ही पड़ता है। अमेरिकासे मिला सन्देश स्पष्ट है-कोई भी नेता जनतासे बड़ा नहीं है और कोई भी राजनीतिक जनादेश स्थायी नहीं है।



सत्यका प्रकाश

❐ अंशुल

प्रकाश सत्यका अभिन्न अंग है। कोई संत जब सत्यकी व्याख्या करता है तो वह प्रकारान्तरसे प्रकाशकी बात कर रहा होता है। झूठ मात्र अन्धकारका प्रतिनिधित्व करता है। सत्य साहस देता है और अन्धेरा भय उत्पन्न करता है। जिस तरह दीपावलीकी अमावस्या सर्वाधिक अंधेरी होती है, उसी तरह जीवनमें भी कभी-कभी ऐसा गाढ़ा अन्धकार आ जाता है, जिसे चीरकर बाहर आना बहुत कठिन होता है। किन्तु उसी ठोस तमसमें मात्र एक कर्मका दीप जल जाय तो अन्धेरा गायब हो जाता है। वास्तवमें अन्धेरेका कोई अस्तित्व ही नहीं है। प्रकाशका अभाव अन्धकारका सृजन करता है। आप पायंगे कि जीवनमें जो अन्धेरा आया है वह आपके मनकी उपज है। वास्तवमें जब आय कर्मसे विरत होते हैं तभी तमसको फैलनेका अवसर मिलता है। कर्म प्रकाशका जन्मदाता है। गीतामें श्रीकृष्ण कहते हैं कि मनुष्य बिना कर्मके रह ही नहीं सकता। तुलसीने गाया- कर्म प्रधान विस्व करि राखा। कर्म करते रहो तो फिर तमस कभी नजदीक आ ही नहीं सकता। निष्क्रिय जीवन अन्धेरों-संकटों-समस्याओंसे भरा होता है और सक्रिय जीवन, प्रकाश, सुख एवं समाधान प्रधान होता है। निराशा अन्धकारकी जननी है। आशा प्रकाशकी ओर उन्मुख करती है। सत्य प्रकाशकी तरह सरल, स्वाभाविक और मुधर होता है। प्रकाश समारोह है, उत्सव है जीवनका और अन्धकार मृत्यु है। प्रकाश हमें जीनेकी कला सिखाता है। हर समय हमारा मार्ग प्रकाशित करता है। उपनिषद् कहती है जब पूर्णसे पूर्ण निकाल लिया जाता है तो जो शेष रहता है, वह भी पूर्ण है। अर्थात् प्रकाशसे प्रकाशकी ओर चलते रहो तो कभी तमस मार्गमें आयेगा ही नहीं। जैसे पुनर्जीवन इसलिए नहीं है कि मृत्यु है, पुनर्जीवन इसलिए है कि जीवन है। हम सब कुछ सकारात्मक सोचें, सकारात्मक देखें तो अन्धेरा कभी हमारे सामने नहीं आयगा। हम निष्क्रिय होकर बैठे हैं, अतः सामने अन्धेरा है। हम जैसे ही सक्रिय हो जायंगे सामने प्रकाश ही प्रकाश फैल जायगा। हम जीवनमें अन्धेरेको, असत्यको प्रश्रय ही क्यों दे। हम इसे माने ही क्यों? वास्तविक तो यही है कि अन्धेरा कभी था ही नहीं। सूरज नहीं है, इसलिए रात्रि है। सूरजका अभाव रात्रिका कारण है और सूर्योदय रात्रिका अवसान। इसीसे हम सत्य, कर्मकी ओर प्रवृत्त रहें तो प्रकाश ही प्रकाश हो जायगा। दीपावलीका दीपोत्सव हमें यही सिखाता है। हर समय कर्मका दीप जलाते रहो यही जीवनका मर्म है।

आंकड़ोंकी बाजीगरीमें आत्मनिर्भरता गायब

❐ पूरन चंद सरीन

विश्व बैंकके आंकड़ोंपर सरकारको अपनी पीठ थपथपाने और विपक्षी आलोचनाको पटखनी देनेका अवसर मिल गया है। परन्तु असली सवाल यह है कि शहरी हो या देहाती, सामान्य नागरिकके जीवनमें कितना बदलाव आयाघ् विश्व बैंककी अप्रैल २०२६ की रिपोर्ट के अनुसार २०११-१२ से २०२३-२४ के बीच भारतमें निम्न-मध्यम आय वाले देशोंके लिए निर्धारित गरीबी रेखा, प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ३९६ रुपये (२०२१ की क्रय-शक्तिके आधारपर) की आमदनी हुई। मतलब कि गरीबी रेखासे नीचे रहने वाली आबादी लगभग ५८ प्रतिशतसे घटकर १६ प्रतिशत रह गयी और करीब ५० करोड़ लोग गरीबी रेखासे ऊपर आये। अत्यधिक गरीबी यानी प्रतिदिन २८३ रुपयेसे कमपर जीवन बिताने वालोंका अनुपात भी २७ प्रतिशतसे घटकर ढाई प्रतिशत रह गया। ध्यान रहे कि यह विश्लेषण २०२१ में किसी व्यक्तिकी खरीददारी करनेकी क्षमतापर आधारित था और अब २०२६ है। इसलिए पूछा जाना चाहिए कि क्या इस आमदनीसे जीवन समृद्ध, सुरक्षित और आत्मनिर्भर बन सकता है।

इन आंकड़ोंका राजनीतिक पक्ष भी कम दिलचस्प नहीं है। सत्ताधारी दल इन्हें अपनी नीतियों और नेतृत्वकी सफलताका प्रमाण बताता है। विपक्ष बेरोजगारी, महंगी, किसानोंकी परेशानी और सरकारी योजनाओंकी कमियोंको सामने लाकर सरकारको घेरता है। राजनीतिमें यह स्वाभाविक है लेकिन समस्या तब पैदा होती है जब आंकड़े राजनीतिक हथियार बन जाते हैं। उल्लेखनीय है कि गरीबीमें कमी एक लम्बी प्रक्रियाका परिणाम होती है। इसमें आर्थिक विकास, लोगोंकी मेहनत, रोजगार, कृषि और उद्योगकी स्थिति, पहलेसे चल रही योजनाएं और वर्तमान सरकारकी नीतियां, सभीकी भूमिका होती है। इसका पूरा श्रेय किसी एक सरकारको देना न्याय नहीं होगा। लगभग ८० करोड़ लोगोंको मुफ्त अनाज, किसानोंको प्रधान मंत्री किसान सम्मान निधिके तहत सालाना ६,००० रुपये, उज्ज्वला योजनाके तहत गैस कनैक्शन, शौचालय निर्माणके लिए सहायता, गरीबोंके लिए आवास, स्वास्थ्य बीमा और महिलाओंके लिए अलग-अलग राज्योंमें नकद सहायता जैसी सुविधाओंका महत्व नकारा नहीं जा सकता। वृद्ध, विधवा और दिव्यांग लोगोंको सामाजिक सुरक्षा देना कोई मुफ्तखोरी नहीं, बल्कि कल्याणकारी राज्यका दायित्व है।

राहत और विकास दो अलग-अलग चीजें हैं। मुफ्त गैस कनेक्शन मिलना और नियमित रूपसे सिलैंडर भरवा पाना दो अलग बातें हैं। शौचालय बन जाना और पानीकी नियमित उपलब्धता होना भी अलग बातें हैं। किसानके खातेमें ६,००० रुपये आना राहत हो सकती है, लेकिन खेतीकी लागत, फसलका उचित मूल्य, सिंचाई और बाजारकी समस्याओंका पूरा समाधान नहीं। मुफ्त राशन पेट भर सकता है लेकिन परिवारकी स्थायी आमदनी नहीं बन सकता। विडंबना यह है कि केन्द्र या राज्यकी कोई और किसी भी दलकी सरकार हो, कोई यह नहीं जानना चाहता कि इन योजनाओंसे लाभार्थियोंके जीवनमें दीर्घकालीन बदलाव कितना आया। क्या बच्चोंकी शिक्षा बेहतर हुई। क्या महिलाओंको आर्थिक स्वतंत्रता मिली। क्या युवाओंको कौशल और रोजगार मिला। क्या परिवार कुछ वर्षों बाद सरकारी सहायताके बिना भी अपनी जरूरतें पूरी करनेकी स्थितिमें पहुंचा। आजका पढ़ा-लिखा युवा केवल राहत नहीं चाहता, नौकरी चाहता है, अपना कारोबार शुरू करना चाहता है और अपने परिवारका भविष्य सुरक्षित करना चाहता है। भारत सरकारके आंकड़े बताते हैं कि १५ से २९ वर्षके युवाओंमें बेरोजगारी दर दस प्रतिशत थी। शहरी युवाओंमें यह १४ प्रतिशत रही। केवल पांच प्रतिशत युवाओंने ही औपचारिक व्यावसायिक या तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त किया था। लगभग हर चौथा युवा न रोजगारमें था, न शिक्षामें और न ही प्रशिक्षणमें। यह केवल बेरोजगारीकी कहानी नहीं है, बल्कि हमारे कौशल और अवसरोंके बीचकी खाई है। अपना छोटा उद्योग या कारोबार शुरू करने